<u>सूचित करने योग्य</u>

भारत के सर्वोच्च न्यायालय

अपराधिक अपीली क्षेत्राधिकार

2024 का आपराधिक अपील न्यायिक याचिका सं. 523

(@ विशेष अनुमति याचिका 2021 का अपराधिक अपील सं.- 6562)

भारत शेर सिंह कलसिया ....अपीलार्थी

बनाम

बिहार राज्य और एक अन्य ....प्रतिवादीगण

आर 1:बिहार राज्य

आर 2: महाराज कुमार मान विजय सिंह

<u>विचार के लिए मुद्दा</u>

क्या उच्च न्यायालय आई.पी.सी. की धाराएँ 409, 467, 468, 471 और 420 में दर्ज प्राथमिकी को रद्द करने के अनुरोध को अस्वीकार करने में उचित था। आपराधिक कृत्यों, पावर ऑफ अटॉर्नी-पी. ओ. ए. का दुरुपयोग, संपत्ति का दुरुपयोग, और धोखाधड़ी वाले बिक्री विलेख को निष्पादित करने के लिए विक्रेता के खिलाफ, जब उसकी पी. ओ. ए. के निष्पादन में कोई भूमिका नहीं थी और न ही पी. ओ. ए. धारक द्वारा भूमि-मालिकों/प्रमुखों के साथ किसी भी दुर्व्यवहार में।

<u>हेडनोट्स</u>

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - कीधारा 482-एफ. आई. आर. को रद्द करना-भूमि मालिकों/प्रमुखों द्वारा अपनी संपत्ति के प्रबंधन और रखरखाव के लिए सूचना देने वाले और अन्य लोगों के पक्ष में निष्पादित पावर ऑफ अटॉर्नी-पी. ओ. ए.-आरोप कि पी. ओ. ए. धारक ने भूमि मालिकों की संपत्ति का कुछ हिस्सा अपीलकर्ता-विक्रेता को बेच दिया और देहरादून में विक्रेता के पक्ष में बिक्री विलेख को निष्पादित किया जहां भूमि स्थित है, और जब पूछा गया, तो पी. ओ. ए. ने कानूनी नोटिस का जवाब नहीं दिया और न ही सूचना देने वाले और अन्य लोगों को बिक्री के बारे में कोई जानकारी दी-दर्ज मामला। आई.पी.सी. की धाराएँ 409, 467, 468, 471 और 420 के तहत अभियुक्त और विक्रेता के खिलाफ आपराधिक कृत्यों का आरोप लगाते हुए मामला दर्ज, कि पी. ओ. ए. का दुरुपयोग करके, उन्होंने संपत्ति का दुरुपयोग किया, खाते को प्रस्तुत नहीं किया और भूमि मालिकों के हस्ताक्षर के बिना बिक्री विलेख प्राप्त किया-मजिस्ट्रेट, बक्सर ने अपराधों का संज्ञान लिया-एफ. आई. आर. को रद्द करने के लिए याचिका-उच्च न्यायालय द्वारा खारिज-अपीलार्थी द्वारा चुनौतीः

माना गयाः उपयुक्त मामले में, अवांछित आपराधिक अभियोजन के खिलाफ और अनावश्यक मुकदमे की संभावना से सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए-तथ्यों पर, विवाद, यदि कोई हो, तो भूमि मालिकों/प्रमुखों के बीच और/या उनके और पी. ओ. ए. धारक-विक्रेता को आपराधिक मुकदमे में घसीटना उचित नहीं होगा, जब उसकी पी. ओ. ए. के निष्पादन में कोई भूमिका नहीं थी और न ही पी. ओ. ए. धारक द्वारा भूमि मालिकों/प्रमुखों के साथ कोई दुर्व्यवहार किया गया था-इसके अलावा, पूरी राशि का भुगतान विक्रेता द्वारा पी. ओ. ए. धारक को किया गया था-इसके अलावा, केवल विवाद पी. ओ. ए. धारक द्वारा देहरादून में विक्रेता के पक्ष में देहरादून में स्थित संपत्ति के लिए किए गए बिक्री विलेख से संबंधित था, इस प्रकार,

देहरादून की अदालतों द्वारा जांच की जानी चाहिए-इसके अलावा, देहरादून में भूमि मालिकों/प्रमुखों द्वारा समान कारण के लिए दायर एक मुकदमा प्रतिवादी के पक्ष में खारिज कर दिया गया था, इस प्रकार, हस्तक्षेप का मामला नही बनता है- विवादित निर्णय को रद्द कर दिया जाता है-प्राथमिकी भी संज्ञान लेने का आदेश और उससे उत्पन्न सभी परिणामी कार्य, जहाँ तक वे अपीलकर्ता से संबंधित है, रद्द किए जाता है। [पैरा 21,34,35]

विलेख और दस्तावेज-किसी विलेख या अनुबंध का निर्माण-भूमि मालिकों/प्रमुखों द्वारा निष्पादित पावर ऑफ अटॉर्नी-पी. ओ. ए., उस व्यक्ति के पक्ष में, जिससे विक्रेता ने भूमि खरीदी थी-पी. ओ. ए. के खंड 3 और 11 ने मिलकर पी. ओ. ए. धारक को विलेख निष्पादित करने के लिए अधिकृत किया, जिसमें बिक्री भी शामिल है, इस संबंध में विचार प्राप्त करें और भूमि मालिकों/प्रमुखों की ओर से विचार स्वीकार करने पर पंजीकरण के लिए आगे बढ़ें-पी. ओ. ए. के खंड 15 में कहा गया है कि पी. ओ. ए. धारक को भूमि मालिकों/प्रमुखों द्वारा हस्ताक्षरित बिक्री विलेख या अन्य दस्तावेजों को पंजीकरण के लिए प्रस्तुत करने और उनके निष्पादन को स्वीकार करने के लिए अधिकृत किया गया था-व्याख्याः

माना गयाः इसे सामंजस्य पूर्ण रुप से व्याख्या किया जाना चाहिए और साथ ही तार्किक रुप से खंडों के संयुक्त पड़ने का प्रभाव जब तीन खंड पढे जाते है तो खंड पढे जाते है तो खंड 15, पी.ओ.ए. के खंड 3 और 11 के अतिरिक्त होता है और उसका मानमर्दन नही होता है-आकस्मिकताओं के अलावा जहाँ पी.ओ.ए. धारक को किसी भी प्रकार के विलेख को निष्पादित करने और प्रतिफल प्राप्त करने के लिए अधिकृत किया गया था, जिसमें भूमि मालिकों/प्रमुखो ने यह अधिकार बरकरार रखा कि यदि कोई बिक्री विलेख पर हस्ताक्षर किए गए थे, वही पी.ओ.ए. धारक इसे पंजीकरण के लिए प्रस्तुत करने और संबंधित अधिकारी के समक्ष निष्पादन को स्वीकार करने के लिए भी अधिकृत था- इस प्रकार पी.ओ.ए. के खंड

3,11 और 15 के बीच कोई विरोधाभास नही है-सभी तीन खंड इस तरह समझााए जाने में सक्षम है कि वे अपने क्षेत्र में काम करते है और उन्हे बेकार नही ठहराया जाता है- यहाँ तक कि यदि एक खंड 3 और 11 और दूसरी ओर खंड 15 के बीच कोई टकराव माना जाता है तो खंड 3, 11 और 15 पर प्रबल होगा। किसी विलेख या अनुबंध का अर्थ निकालते समय बाद के खंड/खंडो केस कानून का हवाला दिया गया। [पैरा 24,27-30]

मामला कानून उद्धृत किया गया

मुकुल अग्रवाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, **(2020) 3 एस. सी. सी. 402;** के. जी. प्रेमशंकर बनाम पुलिस निरीक्षक, [2002] 2 पूरक एससीआर 350:**(2002) 8 एस. सी. सी. 87;** श्रीमती राज कुमारी विज़ बनाम देव राज विज़, [1977] 2 एससीआर 997:**(1977) 2 एस. सी. सी. 190;** राधा सुंदर दत्ता बनाम मोहम्मद जहादुर रहीम, [1959] 1 एससीआर 1309:**ए. आई. आर. 1959 एस. सी. 24-निर्दिष्ट।**

फोर्ब्स बनाम गिट, **[1922] 1 एसी 256-संदर्भित।**

अधिनियमों की सूची

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973; दंड संहिता, 1860।

मुख्य शब्दों की सूची

पावर ऑफ अटॉर्नी; एफ. आई. आर. को रद्द करना; बिक्री विलेख; कानूनी नोटिस; पावर ऑफ अटॉर्नी का दुरुपयोग; दुरुपयोग; अवांछित आपराधिक अभियोजन; अनावश्यक मुकदमा; पावर ऑफ अटॉर्नी धारक; पावर ऑफ अटॉर्नी का निष्पादन; पावर ऑफ अटॉर्नी धारक द्वारा गलत काम; एक विलेख या अनुबंध का निर्माण; सामंजस्यपूर्ण व्याख्या; विचार; क्षेत्राधिकार; कार्रवाई का कारण; आपराधिक मुकदमा।

से उत्पन्न मामला

आपराधिक याचिका न्यायनिर्णयः 2024 की आपराधिक अपील सं.- 523।

2013 के आपराधिक एम सं.- 42776 में पटना में उच्च न्यायालय क्षेत्राधिकार के न्यायिक निर्णय और आदेश दिनांक 12.03.2021 से।

दलों के लिए उपस्थिति

मनिंदर सिंह, वरिष्ठ अधिवक्ता, सुश्री शिरीन खजुरिया, सुश्री ओशी वर्मा, राजेश बत्रा, सुश्री सोनिया कुकरेजा, रोहित चंद्र, अपीलार्थी के लिए अधिवक्तागण

सिद्धार्थ दवे, वरिष्ठ अधिवक्ता, संतोष कृष्णन, साइमन बेंजामिन, सुश्री सोनम आनंद, सुश्री दीपशिखा संसांवाल, सुश्री मृदुल सिंह, देवाशीष भरुका, सुश्री सर्वश्री, शोभित द्विवेदी, सुश्री स्वाति मिश्रा, अधिवक्तागण, उत्तरदाताओं के लिए।

निर्णय

अहसानउद्दीन अमानुल्लाह, न्यायमूर्ति

दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्तागण को सुना।

2. अनुमति दी गई।

3. वर्तमान अपील अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 12.03.2021 (इसके बाद 2) से उत्पन्न होती है। पटना में उच्च क्षेत्राधिकार द्वारा 2013 के आपराधिक विविध सं.- 2013 की 4277 सी (इसके बाद विवादित निर्णय के रुप में संदर्भित) में पारित (जिसे इसके बाद "उच्च न्यायालय" के रूप में संदर्भित किया गया है) जिसके द्वारा भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे इसके बाद "आई. पी. सी". के रूप में संदर्भित किया गया है) की धारा

467,468,469 और 471 के तहत डुमरांव पुलिस स्टेशन, बक्सर, बिहार में दर्ज 2011 की प्रथम सूचना रिपोर्ट (आई. डी. 1) को रद्द करने की प्रार्थना को खारिज कर दिया गया है।

<u>संक्षिप्त तथ्यः</u>

4. सूचना देने वाला/उत्तरदाता सं.-2 महाराज कुमार मान विजय सिंह उर्फ मान विजय सिंह ने डुमरांव पुलिस स्टेशन के स्टेशन हाउस ऑफिसर को लिखित बयान में आरोप लगाया कि राज कुमार करण विजय सिंह, पुत्र ग्रुप कैप्टन स्वर्गीय महाराज कुमार रण विजय सिंह ने 3 में से 5 व्यक्तियों की संपत्ति बेच दी थी। स्वयं सूचना देने वाले सहित सूचना देने वाले का परिवार। यह आरोप लगाया गया था कि मुखबिर और उसके परिवार के सदस्यों ने पहले राज कुमार करण विजय सिंह को खसरा सं.-459G, 472,474,475,476 और 478 बी वाली संपत्ति के मालिकों के संबंध में और आगे ग्राम कार्बरी ग्रांट, तहसील विकासनगर, परगना पचवैन, जिला देहरादून में स्थित खसरा सं.- 459 ई. के संबंध में एक पावर ऑफ अटॉर्नी (जिसे इसके बाद "पीओए" के रूप में संदर्भित किया गया है) दिया था। यह कहा गया था कि मुखबिर महाराज कुमार मान विजय सिंह और उनके भाई कुमार चंद्र विजय सिंह, दोनों महाराजा कमल सिंह के बेटे, श्रीमती। संगीता कुमारी, इंदुमती, रण विजय सिंह, उनके पिता की बहन, पिता, बहनें और चाची ने अपनी संपत्ति के प्रबंधन और रखरखाव के लिए 12.04.1994 पर एक पी. ओ. ए. निष्पादित किया। इसमें यह प्रावधान किया गया था कि पी. ओ. ए. धारक पी. ओ. ए. के भूमि मालिकों/प्रमुखों के हस्ताक्षर प्राप्त करने के बाद मुकदमा चलाएगा, शिकायत दायर करेगा। यह आरोप लगाया गया था कि संपत्ति का कुछ हिस्सा सूचना देने वाले और अन्य लोगों को वर्तमान अपीलकर्ता को बेच दिया गया था और इस तरह की जानकारी पर, सूचना देने वाले ने पी. ओ. ए. धारक को एक कानूनी नोटिस भेजा जिसमें उसे अपीलकर्ता के साथ साजिश में की गई बिक्री का विवरण देने का निर्देश दिया गया था और पी. ओ. ए. को रद्द करने के लिए एक नोटिस भी दिया गया था, लेकिन

एजेंट ने सूचना देने वाले और पी. ओ. ए. को निष्पादित करने वाले अन्य लोगों को कोई जानकारी/जवाब नहीं दिया। इस पृष्ठभूमि में, और इस तरह, आपराधिक मामला शुरू किया गया था। यह आरोप लगाया गया था कि अपीलार्थी सहित अभियुक्तों द्वारा पी. ओ. ए. का दुरुपयोग करके आपराधिक कृत्य किए गए थे और आरोप लगाया गया था कि उन्होंने संपत्ति का दुरुपयोग किया था, खाते (खातों) को प्रस्तुत नहीं किया था और बिक्री विलेख धोखाधड़ी था क्योंकि यह पी. ओ. ए. धारक के भूमि-मालिकों/प्रमुखों के हस्ताक्षर प्राप्त किए बिना था। जाँच के बाद, पुलिस ने आई. पी. सी. की धारा 409,467,468,471 और 420 के तहत एक मामले का पता लगाने के लिए अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की थी और विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, बक्सर इसके बाद 2011 के जी. आर. No.515 में आई. पी. सी. की धारा 409,467,468,471 और 420 के तहत अपराधों का संज्ञान लिया।

5. मूल रूप से एफ. आई. आर. को रद्द करने के लिए दायर उच्च न्यायालय की फाइल पर 2013 के आपराधिक विविध सं.-42776 के लंबित रहने के दौरान, अपीलार्थी ने 2017 का अंतर्वर्ती आवेदन सं.-1261 दायर किया जिसमें ऊपर उल्लिखित 18.11.2014 के आदेश को रद्द करने के लिए अनुरोध में संशोधन करने की मांग की गई थी।

<u>अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुतियाँः</u>

6. अपीलार्थी के वरिष्ठ वकील ने कहा कि अपीलार्थी केवल उस भूमि के एक हिस्से का विक्रेता है जिसे राज कुमार करण विजय सिंह को 12.04.1994 को दिए गए पी. ओ. ए. में शामिल किया गया था।

7. उन्होंने तर्क दिया कि बिक्री विलेख दिनांक 24.08.2000 को दिए गए पी. ओ. ए. के आधार पर मान विजय सिंह, पुत्र कमल सिंह, भूमि मालिकों/प्रमुखों द्वारा। यह प्रस्तुत किया गया था कि यह शर्तों के संबंध में उक्त पी. ओ. ए. के भूमि मालिकों/निष्पादकों के बीच एक आंतरिक मामला था, जो स्पष्ट रूप से पक्षों *के बीच* बाध्यकारी थे।

8. विद्वान वरिष्ठ वकील ने पी. ओ. ए. की सामग्री, विशेष रूप से उसके खंड 3 की ओर न्यायालय का ध्यान आकर्षित किया और प्रस्तुत किया कि पी. ओ. ए. धारक को किसी भी प्रकार के विलेख को निष्पादित करने और पी. ओ. ए. के भूमि-मालिकों/निष्पादकों की ओर से विचार प्राप्त करने और ऐसे विलेख को पंजीकृत करने का अधिकार है। इस प्रकार, यह तर्क दिया गया कि निम्नलिखित विवाद में नहीं थेः(क) पी. ओ. ए. को न तो जाली बनाया गया था और न ही वापस लिया गया था; (ख) अपीलार्थी पी. ओ. ए. के अंतर्गत आने वाली भूमि के एक टुकड़े का विक्रेता था, और (ग) ऐसी बिक्री के लिए, मूल्यवान प्रतिफल का भी भुगतान किया गया था। इस दृष्टिकोण में, यह प्रस्तुत किया गया था, अपीलार्थी किसी भी कुकर्म, बहुत कम, किसी भी आपराधिक कार्य के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जाए।

9. विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया कि पुनरीक्षण न्यायालय सही था कि जहां तक अपीलार्थी का संबंध है, संज्ञान पूरी तरह से अवैध था क्योंकि अपीलार्थी के खिलाफ कोई अपराध नहीं बनाया गया था। यह आगे तर्क दिया गया कि अधिकार क्षेत्र के मुद्दे पर भी, प्रश्नगत बिक्री विलेख को देहरादून, उत्तराखंड में निष्पादित किया गया था और भूमि भी देहरादून में स्थित है। यह प्रस्तुत किया गया था कि प्रतिफल का भुगतान भी देहरादून में किया गया था। यह तर्क दिया गया कि सूचना देने वाले ने पी. ओ. ए. धारक द्वारा अपीलकर्ता के पक्ष में निष्पादित बिक्री विलेख को दरकिनार करने और खातों को प्रस्तुत करने के लिए विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, विकास नगर, देहरादून की अदालत में 2011 का मूल मुकदमा सं.-.27 भी दायर किया, जिसे खारिज कर दिया गया और यह पाया गया कि पी. ओ. ए.-धारक/एजेंट को विचार राशि करने के बाद संपत्ति बेचने के लिए विधिवत अधिकृत किया गया था। भूमि-मालिकों/प्रमुखों की ओर से राशि, जो खातों को प्रस्तुत करने के भी हकदार नहीं थे। इस प्रकार, यह प्रस्तुत किया गया कि एक दीवानी कार्यवाही में जिसमें पी. ओ. ए. धारक के संपत्ति बेचने के अधिकार को बरकरार रखा गया था और

अपीलार्थी ने पी. ओ. ए. के तहत आने वाली भूमि के ऐसे पी. ओ. ए. धारक से संपत्ति खरीदी थी, वर्तमान एफ़. आई. आर. अपने आप में कानून प्रश्नगत प्रक्रिया का कृप्रयोग और दुरुपयोग है, जहां तक अपीलार्थी का संबंध है। इसके अलावा, उन्होंने प्रस्तुत किया कि पी. ओ. ए. को रद्द करना केवल 24.08.2000 को बिक्री विलेख के निष्पादन के लगभग साढ़े दस साल बाद 09.01.2011 को था।

10. इसके अलावा, यह तर्क दिया गया कि यह मुद्दा विशुद्ध रूप से नागरिक प्रकृति का है, यानी इस बात पर विवाद है कि क्या पी. ओ. ए.-धारक ने बेची गई भूमि के लिए प्राप्त भूमि-मालिकों/प्रमुखों को धन का भुगतान किया है, इससे सिविल को प्रमुखों के खिलाफ कार्रवाई का कारण बन सकता है। पी. ओ. ए. धारक के खिलाफ पक्ष, लेकिन अपीलार्थी को इस तरह के किसी भी विवाद में नहीं घसीटा जा सका।

11. विद्वान वरिष्ठ वकील ने प्रस्तुत किया कि बिक्री के समय, पी. ओ. ए. वैध था और 5 के साथ पठित खंड 3 और 11 ने पी. ओ. ए. धारक को संपत्ति बेचने, बिक्री विलेख पंजीकृत करने और प्रतिफल प्राप्त करने का पूरा अधिकार दिया। उन्होंने प्रस्तुत किया कि खंड 15, जिस पर शिकायतकर्ता ने भरोसा किया है, लागू नहीं था। इसके अलावा, न तो प्राथमिकी में और न ही संज्ञान लेने वाले आदेश में या यहां तक कि कानूनी नोटिस (ओं) में भी, अपीलार्थी का कोई संदर्भ नहीं है, और आरोप पत्र में केवल यह कहा गया है कि विक्रेता/पी. ओ. ए.-धारक को बेचने का अधिकार नहीं था। यह तर्क दिया गया कि अपीलार्थी को अग्रिम जमानत देते समय, उच्च न्यायालय ने 2013 के आपराधिक विविध सं.-.44830 में दिनांकित 20.02.2014 आदेश द्वारा, जिसे पी. ओ. ए.-धारक द्वारा दायर 2013 के आपराधिक विविध सं.-.45146 के साथ सुना और तय किया गया था, उक्त पी. ओ. ए.-धारक ने यह रुख अपनाया था 10 कि वह सूचना देने वाले को बिक्री की कार्यवाही देने/वापस

करने के लिए तैयार था, सूचना देने वाले के मामले को स्वीकार किए बिना और ऐसी शर्त के अधीन, उसे अग्रिम जमानत भी दी गई थी।

12. विवाद की दीवानी प्रकृति पर, यह प्रस्तुत किया गया था कि यह मुद्दा पी. ओ. ए. के विभिन्न खंडों की व्याख्या से संबंधित है, जिसे आपराधिक कार्यवाही में नहीं किया जा सकता है और संशोधन न्यायालय ने इसे एक दीवानी विवाद माना था। यह भी बताया गया कि बक्सर न्यायालयों में क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र की कमी होगी।

13. यह प्रस्तुत किया गया था कि 2011 का मूल मुकदमा सं. 27, प्रतिवादी सं. 2 और अन्य, देहरादून में, एफ. आई. आर. दर्ज करने से पहले थे, जिसे 07.12.2017 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था, जिसमें कहा गया था कि पी. ओ. ए. धारक को भूमि बेचने, प्रतिफल प्राप्त करने का अधिकार था और इसलिए बिक्री विलेख वैध था। यह तर्क कि प्रत्यर्थी नं। 2 और अन्य के पास 11 नहीं था दिनांकित 24.08.2000 बिक्री विलेख की जानकारी नहीं थी पर विश्वास नहीं किया जा सका और मुकदमे को भी समय-बाधित माना गया क्योंकि प्रार्थना दिनांकित 24.08.2000 बिक्री विलेख को अलग करने के लिए थी।

14. विद्वान वरिष्ठ वकील ने भरोसा किया कि **मुकुल अग्रवाल बनाम उत्तर प्रदेश (2020) में निर्णय 3 एस. सी. सी. 402,** जिसमें अनुच्छेद 7[1] में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दीवानी न्यायालय का यह निष्कर्ष कि समझौता जाली दस्तावेज नहीं था, आपराधिक शिकायत के मूल आधार को गायब कर देता है।

15. भी इस निर्णय पर भी भरोसा रखा गया था कि **केजी प्रेमशंकर बनाम पुलिस निरीक्षक, (2002) 8** एस. सी. सी. 87, जहाँ पैराग्राफ 15,16,30-32[2] पर, भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की धारा 40-43 की व्याख्या एक ही कारण से संबंधित एक ही व्यक्ति (व्यक्तियों) के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही पर दीवानी न्यायालय के निर्णय की प्रासंगिकता के संबंध में की गई है। जहॉ तक क्षेत्रीय क्षेत्राधिकार का सवाल है, यह विदान वरिष्ठ

अधिवक्ता का रुख था कि श्रृखंला में एकमात्र कडी यह है कि पी.ओ.ए. बक्सर में निष्पादित किया गया था। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धाराओं की व्याख्या उसी कारण से संबंधित एक ही व्यक्ति (ओं) के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही पर एक दीवानी न्यायालय के निर्णय की प्रासंगिकता के संबंध में की गई है। जहाँ तक क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र का संबंध है, यह विद्वान वरिष्ठ वकील का रुख था कि श्रृंखला में एकमात्र कड़ी यह है कि पी. ओ. ए. को निष्पादित किया गया था। लेकिन वर्तमान मामले में, पी. ओ. ए. के निष्पादन के संबंध में कोई विवाद नहीं है और विवाद केवल उस बिक्री विलेख के निष्पादन से संबंधित है जो देहरादून में हुआ था जहां भूमि स्थित है। इस प्रकार, निवेदन यह था कि बक्सर के न्यायालयों को वर्तमान मामले में कोई अधिकार क्षेत्र नहीं होगा।

16. विद्वान वरिष्ठ वकील ने अपनी दलीलों का सारांश यह तर्क देते हुए दिया कि हमारे समक्ष उठाए गए सभी बिंदुओं को उच्च न्यायालय के समक्ष लिया गया था, लेकिन विवादित फैसले में उन पर विचार नहीं किया गया है।

उत्तरदाता सं. 2 द्वारा प्रस्तुतियाँः

17. इसके विपरीत, प्रतिवादी सं.-2 की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील ने2 प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय के समक्ष मामला क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र के प्रश्न तक ही सीमित था और यह देखा गया कि यह साक्ष्य पर निर्भर करता है। इस प्रकार, यह प्रस्तुत किया गया था कि क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र मामले की जड़ तक नहीं जाता है, बल्कि केवल प्रशासनिक सुविधा के लिए है। **श्रीमती राज कुमारी विज़ बनाम देव राज विज़ (1977) 2 एस सी सी 190,** में धारा के निर्णय पर भरोसा रखा गया, पैराग्राफ 7[3] में प्रासंगिक है।

18. यह प्रस्तुत किया गया था कि अपीलार्थी ने पी. ओ. ए. के बल पर जानबूझकर शिकायतकर्ता की भूमि खरीदी है, जिसके लिए स्वयं भूमि की बिक्री के लिए

भूमि मालिकों/प्रमुखों की सहमति की आवश्यकता होती है, जैसा कि पी. ओ. ए. के खंड 15 से स्पष्ट होगा।

19. विद्वान वरिष्ठ वकील ने वैकल्पिक रूप से यह रुख अपनाया कि यदि अपीलार्थी राहत दी गई थी एफ. आई. आर. को रद्द करने के संबंध में यह अपीलार्थी तक ही सीमित हो सकता है और समग्र रूप से एफ. आई. आर. तक नहीं, जहां अन्य सह-अभियुक्त पर आरोप पत्र दायर किया गया है और उसे मुकदमे का सामना करने के लिए बुलाया गया है। यह आग्रह किया गया था कि यदि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (इसके बाद "दंड प्रक्रिया संहिता" के रूप में संदर्भित) की धारा 319 के तहत साक्ष्य आवश्यक है, तो अपीलार्थी को बुलाने के लिए निचली अदालत को खुला छोड़ दिया जा सकता है।

<u>राज्य के स्वयं के बारे में सुझावः</u>

20. बिहार राज्य की ओर से वर्तमान अपील में की गई प्रार्थना का विरोध करते हुए और प्राथमिकी के आधार पर अपीलार्थी के अभियोजन को उचित ठहराते हुए एक जवाबी याचिका दायर की गई है।

<u>विश्लेषण, कारण और निष्कर्षः</u>

21. पक्षों के विद्वान वकील द्वारा तथ्यों और प्रस्तुतियों पर विचार करने के बाद, इस न्यायालय ने पाया कि हस्तक्षेप का मामला बनाया गया है। निर्विवाद और स्वीकृत तथ्य हैं कि पी. ओ. ए. को भूमि-मालिकों/प्रमुखों द्वारा निष्पादित किया गया था, जिसमें प्रतिवादी सं.2 और अन्य 12.04.1994 को, उस व्यक्ति के पक्ष में, जिससे अपीलार्थी ने 24.08.2000 को भूमि खरीदी थी।

22. यह भी एक तथ्य है कि पी. ओ. ए. धारक ने एक बिक्री विलेख निष्पादित किया और अपीलार्थी के पक्ष में इसे देहरादून में पंजीकृत कराया और यह भी कि भूमि

देहरादून में स्थित है। पी. ओ. ए. के विभिन्न खंडों के सामंजस्यपूर्ण अध्ययन के संबंध में बहुत कुछ कहा गया है। खंड 3,11 और 15 जो निम्नानुसार हैंः

> '3. हमारी ओर से किसी भी प्रकार के विलेख को निष्पादित करना और प्रतिफल, यदि कोई हो, प्राप्त करना और उसी का पंजीकरण कराना।
>
> xxx
>
> 11. भूमि, जीवित स्टॉक, पेड़ आदि सहित चल या अचल संपत्ति को बेचना और हमारी ओर से ऐसी बिक्री का भुगतान प्राप्त करना।
>
> xxx
>
> 15. हमारे द्वारा हस्ताक्षरित सभी बिक्री विलेख या अन्य दस्तावेजों को पंजीकरण के लिए प्रस्तुत करना और जिला पंजीयक या उप-पंजीयक या ऐसे अन्य अधिकारी के पास जैसा भी मामला हो, लोगों के समक्ष उनके निष्पादन को स्वीकार करना उक्त विलेखों और दस्तावेजों को पंजीकृत करने और पंजीकरण के बाद उन्हें वापस लेने का अधिकार हो सकता है।'

23. उपरोक्त का केवल अवलोकन इंगित करता है कि खंड 3 के अनुसार, पी. ओ. ए. धारक को किसी भी प्रकार के विलेख को निष्पादित करने, इस संबंध में विचार प्राप्त करने और उसका पंजीकरण कराने के लिए अधिकृत किया गया था। पी. ओ. ए. के खंड 11 में आगे यह स्पष्ट किया गया है कि पी. ओ. ए. धारक को भूमि, पशुधन, पेड़ आदि सहित चल या अचल संपत्ति बेचने और भूमि मालिकों/प्रमुखों की ओर से ऐसी बिक्री का भुगतान प्राप्त करने का अधिकार था। हालाँकि, पी. ओ. ए. का खंड 15, जिस पर प्रतिवादी सं.2, वर्तमान अपील का विरोध करते हुए कहा गया है कि पी. ओ. ए. धारक को भूमि मालिकों/प्रमुखों द्वारा हस्ताक्षरित बिक्री विलेख या अन्य दस्तावेजों को पंजीकरण के लिए

प्रस्तुत करने और जिला पंजीयक या उप-पंजीयक या ऐसा अन्य अधिकारी जिसके पास, जैसा भी मामला हो के समक्ष उनके निष्पादन को स्वीकार करने के लिए अधिकृत किया गया था। उक्त विलेखों और दस्तावेजों को पंजीकृत करने और पंजीकरण के बाद उन्हें वापस लेने का अधिकार हो।

24. इस प्रकार, न्यायालय को पूर्व-निकाले गए खंडों के संयुक्त पठन के प्रभाव की सामंजस्यपूर्ण और तार्किक रूप से व्याख्या करने की आवश्यकता है। इस प्रकार, हमारे प्रयास के लिए, पहली बार में, आवश्यक रूप से हमें तीनों को प्रभावी बनाने की आवश्यकता होगी और कोई अन्य नहीं। ऐसा करने के लिए, यह न्यायालय इस बात का परीक्षण करेगा कि क्या तीनों खंडों को स्वतंत्र रूप से प्रभावी किया जा सकता है और अभी भी अन्य खंडों के साथ संघर्ष में नहीं हो सकता है।

25. इस उद्देश्य के साथ, जब तीन खंडों को पढ़ा जाता है, तो यह स्पष्ट है, दोहराव की कीमत पर, कि खंड 3 किसी भी प्रकार के विलेख के निष्पादन और भूमि-मालिकों/प्रमुखों की ओर से विचार, यदि कोई हो, प्राप्त करने से संबंधित है और प्राप्त करने के लिए उसका पंजीकरण किया गया। मूल रूप से, यह किसी भी प्रकार के विलेख का ध्यान रखेगा जिसके द्वारा पी. ओ. ए.-धारक को निष्पादित करने के लिए अधिकृत किया गया था और भूमि-मालिकों/प्रमुख की ओर से विचार प्राप्त करने और पंजीकरण कराने के लिए भी।

26. पी. ओ. ए. का खंड 11 विशेष रूप से भूमि सहित चल या अचल संपत्ति की बिक्री और भूमि-मालिकों/प्रमुखों की ओर से ऐसी बिक्री का भुगतान प्राप्त करने के संबंध में है।

27. इस घटना में, पी. ओ. ए. के खंड 3 और 11 ने पी. ओ. ए. धारक को बिक्री सहित विलेखों को निष्पादित करने, इस संबंध में विचार प्राप्त करने और भूमि-

मालिकों/प्रमुखों की ओर से विचार स्वीकार करने पर पंजीकरण के लिए आगे बढ़ने के लिए अधिकृत किया।

28. पी. ओ. ए. के खंड 15 पर आते हुए, जिसमें कहा गया है कि पी. ओ. ए. धारक को भूमि मालिकों/प्राचार्यों द्वारा हस्ताक्षरित बिक्री विलेख या अन्य दस्तावेजों को पंजीकरण के लिए प्रस्तुत करने और स्वीकार करने के लिए अधिकृत किया गया था हमारी समझ में इसका निष्पादन, पी. ओ. ए. के खंड 3 और 11 के अलावा है और इसका अपमान नहीं है। ऐसा मानने का कारण यह है कि उन आकस्मिकताओं के अलावा जहां पी. ओ. ए.-धारक को किसी भी प्रकार के विलेख को निष्पादित करने और प्रतिफल प्राप्त करने और पंजीकरण कराने के लिए अधिकृत किया गया था, जिसमें भूमि-मालिकों/प्रमुखों की ओर से चल/अचल संपत्ति की बिक्री शामिल थी, भूमि मालिकों/प्रमुखों ने यह अधिकार भी बनाए रखा था कि यदि उनके द्वारा किसी बिक्री विलेख पर हस्ताक्षर किए थे/किए गए थे, तो वही पी. ओ. ए.-धारक इसे पंजीकरण के लिए प्रस्तुत करने और संबंधित प्राधिकरण के समक्ष निष्पादन स्वीकार करने के लिए भी अधिकृत था।

29. इस प्रकार, तत्काल मामले में, यदि ऐसी स्थिति होती कि भूमि-मालिकों/प्रमुखों ने विचाराधीन संपत्ति प्रश्नगत पी. ओ. ए.-धारक द्वारा निष्पादित और पंजीकृत बिक्री विलेख से पहले किसी तीसरे पक्ष के पक्ष में बिक्री विलेख निष्पादित किया होता, और पी. ओ. ए.-धारक ने उक्त बिक्री विलेख पेश नहीं किए होते अपीलार्थी के पक्ष में एक अलग या बाद के बिक्री विलेख को निष्पादित करने और पंजीकृत करने के लिए आगे बढ़े, मामला पूरी तरह से अलग होगा। इसलिए, स्पष्ट रूप से, पी. ओ. ए. के खंड 3,11 और 15 के बीच कोई विरोधाभास नहीं है। पुनः कहने के लिए, पी. ओ. ए. का खंड 15 भूमि-मालिकों/प्रमुखों के साथ बिक्री के लिए एक अतिरिक्त प्रावधान बनाए रखने वाला प्राधिकरण है और इस प्रक्रिया में पंजीकरण और इसके निष्पादन को स्वीकार करने के लिए प्रस्तुति भी शामिल होगी।

30. हमारा मानना है कि तीनों खंड इस तरह से माने जाने में सक्षम हैं कि वे अपने-अपने क्षेत्रों में काम करते हैं और निरर्थक नहीं हैं। इसके अलावा, हम इस बात को ध्यान में रखते हैं कि भले ही हमने एक ओर खंड 3 और 11 और दूसरी ओर खंड 15 के बीच टकराव महसूस किया हो, हमें यह निष्कर्ष निकालना होगा कि खंड 3 और 11 खंड 15 के ऊपर प्रवल होंगे। जब इसका मिलान नहीं किया जा सकता है, तो किसी विलेख या अनुबंध का अर्थ लगाते समय पहले के खंड/खंडो बाद के खंडों पर प्रबल होंगे। इस तरह के प्रस्ताव का संदर्भ है **फोर्ब्स बनाम गिट, [1922] 1 एसी 256[4],** के रूप में पता लगाने योग्य इस न्यायालय के 3-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा अनुमोदित रूप से ध्यान दिया गया **राधा सुंदर दत्ता बनाम मोहम्मद जहांगीरजहांगीर रहीम, ए. आई. आर 1959 एस. सी. 24**। हालाँकि, हम, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, वर्तमान परिदृश्य में तीन खंडों का मिलान करने में सक्षम हुए हैं।

31. एक अन्य तथ्य जिसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है, वह यह है कि यह स्पष्ट है कि यह मामला सह-हितधारकों के बीच विवाद से संबंधित है क्योंकि पी. ओ. ए. धारक सह-हितधारकों/प्रमुखों में से एक श्रीमती इंदुमती आर. वी. सिंह

32. पी. ओ. ए. और इसके निष्पादन/पंजीकरण पर विवाद नहीं होने के कारण, पी. ओ. ए. धारक द्वारा देहरादून में स्थित संपत्ति के लिए अपीलार्थी के पक्ष में देहरादून में निष्पादित बिक्री विलेख से संबंधित एकमात्र विवाद, इस प्रकार उभरते तथ्यात्मक मैट्रिक्स में, स्पष्ट रूप से देहरादून की अदालतों के लिए जांच करने का एक मुद्दा होगा, बक्सर में कार्रवाई के किसी भी कारण को जन्म नहीं देगा।

33. हम यह भी जोड़ सकते हैं कि अधिकार क्षेत्र का यह मुद्दा अपीलार्थी के पक्ष में बिक्री विलेख के निष्पादन के लेन-देन तक सीमित है, न कि किसी अन्य विवाद या विवाद के लिए जो भूमि मालिकों/प्रमुखों के बीच या पी. ओ. ए. धारक के खिलाफ हो सकता

है। इसके अलावा, देहरादून में भूमि मालिकों/प्रमुखों द्वारा प्राथमिकी दर्ज करने से पहले दायर एक मुकदमे को, कार्रवाई के समान कारण के लिए, अपीलार्थी के पक्ष में खारिज कर दिया गया है, जहां बिक्री विलेख को रद्द करने के लिए एक विशिष्ट याचिका खारिज कर दी गई है।

34. संक्षेप में, विवाद, यदि कोई हो, तो भूमि-मालिकों/प्रमुखों के बीच और/या उनके और पी. ओ. ए.-धारक के बीच है। हम समझते हैं कि अपीलार्थी को आपराधिक मुकदमेबाजी में घसीटना अनुचित होगा, जब उसकी न तो पी. ओ. ए. के निष्पादन में कोई भूमिका थी और न ही पी. ओ. ए. धारक द्वारा भूमि मालिकों/प्रमुखों के साथ कोई कुकर्म किया गया था। इसके अलावा, अपीलार्थी द्वारा पी. ओ. ए. धारक को पूरी राशि का भुगतान कर दिया गया है।

35. संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों के समग्र निरीक्षण पर, हम पाते हैं कि विवादित निर्णय को रद् करने की आवश्यकता है और इसके द्वारा रद् जाता है। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि उपयुक्त मामले में अवांछित आपराधिक अभियोजन और अनावश्यक परीक्षण[5] की संभावना से संरक्षण दिया जाना चाहिए। हम 2011 की एफ़. आई. आर. नं. 87 दिनांक 19.03.2011, डुमरांव पुलिस स्टेशन, बक्सर, बिहार के साथ-साथ लेने के आदेश को भी रद्द करते हैं दिनांकित 18.11.2014 को लिए गए संज्ञान और उससे उत्पन्न होने वाले सभी परिणामी कार्य, जहां तक वे अपीलार्थी से संबंधित हैं।

36. उत्तरदाता सं.-2 के लिए वरिष्ठ वकील द्वारा 2 याचिका में कहा गया था कि यदि आवश्यक हो तो निचली अदालत को अपीलार्थी के खिलाफ दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के तहत शक्ति का प्रयोग करने की अनुमति दी जाए। इस पर कोई राय नहीं व्यक्त करते हुए, हम इस चेतावनी को सम्मिलित करते हैं कि विचारण न्यायालय कानून के अनुसार कार्य करेगा।

37. तदनुसार अपील की अनुमति दी जाती है, जिससे पक्षकारों को अपना खर्च खुद वहन करना पड़ता है।

......न्यायमूर्ति [विक्रम नाथ]

......न्यायमूर्ति [अहसानुद्दीन अमानुल्लाह]

नई दिल्ली

31 जनवरी, 2024

[1] '**7.** अपीलीय न्यायालय की निर्णायक राय को देखते हुए कि 30-3-1988 दिनांकित समझौता जाली दस्तावेज नहीं था, आपराधिक शिकायत का आधार ही गायब हो जाता है। परिस्थितियों में अपीलार्थियों पर मुकदमा चलाने की अनुमति देना केवल कानून की प्रक्रिया का पूर्ण दुरुपयोग होगा। इसलिए 2003 के शिकायत मामला संख्या 2705 में कार्यवाही रद्द कर दी जाती है और अपील की अनुमति दी जाती है।'

[2] '**15.** प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित अतिरिक्त सॉलिसिटर-जनरल श्री अल्ताफ अहमद ने प्रस्तुत किया कि वी. एम. शाह मामले [(1995) 5 एस. सी. सी. 767 में इस न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणीः1995 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1077]

> "आपराधिक न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष, दीवानी न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है और इस प्रकार दीवानी न्यायालय के निष्कर्ष को आपराधिक न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष पर प्राथमिकता मिलती है "
>
> (एस. सी. सी. पी. 770, पैरा 11)

विभिन्न निर्णयों में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के खिलाफ है। इसके लिए, उन्होंने साक्ष्य अधिनियम की धारा 41,42 और 43 के प्रावधानों का उचित रूप से उल्लेख किया और प्रस्तुत किया कि साक्ष्य अधिनियम के तहत पिछली कार्यवाही में दिए गए निर्णय किस हद तक प्रासंगिक हैं और इसलिए यह कानून के खिलाफ होगा यदि यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि जैसे ही एक दीवानी मुकदमे में निर्णय और डिक्री पारित की

जाती है तो आपराधिक कार्यवाही को हटाने की आवश्यकता होती है यदि वादी के खिलाफ मुकदमा तय किया जाता है जो आपराधिक कार्यवाही में शिकायतकर्ता है।

16. हमारे विचार में, विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर-जनरल की प्रस्तुति को स्वीकार करने की आवश्यकता है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 40 से 43 में यह प्रावधान किया गया है कि न्यायालयों के कौन से निर्णय प्रासंगिक हैं और किस हद तक। धारा 40 में पूर्व निर्णय, आदेश या डिक्री का प्रावधान है जो कानून द्वारा किसी भी अदालत को किसी मुकदमे का संज्ञान लेते समय या मुकदमा आयोजित करते समय एक प्रासंगिक तथ्य होने से रोकता है, जब सवाल यह होता है कि क्या ऐसे अदालत को ऐसे मुकदमे का संज्ञान लेना चाहिए या ऐसा मुकदमा आयोजित करना चाहिए। धारा 40 निम्नानुसार हैः

> "40. दूसरे मुकदमे या मुकदमे पर रोक लगाने के लिए प्रासंगिक पिछले निर्णय। –किसी भी निर्णय, आदेश या डिक्री का अस्तित्व जो कानून द्वारा किसी भी अदालत को किसी मुकदमे का संज्ञान लेने या मुकदमा चलाने से रोकता है, एक प्रासंगिक तथ्य है जब सवाल यह है कि क्या ऐसे अदालत को ऐसे मुकदमे का संज्ञान लेना चाहिए या ऐसा मुकदमा चलाना चाहिए। .

xxx

30. उपरोक्त चर्चा से जो निकलता है वह यह है-(1) साक्ष्य अधिनियम की धारा 40 से 43 के तहत दिए गए पिछले अंतिम निर्णय पर भरोसा किया जा सकता है; (2) समान पक्षों के बीच दीवानी मुकदमों में, प्रति न्यायिक सिद्धांत लागू हो सकता है; (3) किसी आपराधिक मामले में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 300 का प्रावधान है कि एक बार किसी व्यक्ति को दोषी ठहराए जाने या बरी किए जाने के बाद, उसी अपराध के लिए उस पर फिर से मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है यदि उसमें उल्लिखित शर्तें पूरी हो जाती हैं; (4) यदि आपराधिक मामला और दीवानी कार्यवाही एक ही कारण के लिए है, तो दीवानी अदालत का निर्णय प्रासंगिक होगा यदि धारा 40 से 43 की किसी भी शर्तों को पूरा किया जाता है, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता है कि धारा 41 में दिए गए प्रावधानों को छोड़कर वही निर्णायक होगा। धारा 41 में यह प्रावधान है कि कौन सा निर्णय उसमें जो कहा गया है उसका निर्णायक प्रमाण होगा।

31. इसके अलावा, पिछली दीवानी कार्यवाही में पारित निर्णय, आदेश या डिक्री, यदि प्रासंगिक हो, जैसा कि धारा 40 और 42 या साक्ष्य अधिनियम के अन्य प्रावधानों के तहत प्रदान किया गया है, तो प्रत्येक मामले में, अदालत को यह तय करना होगा कि वह किस हद तक बाध्यकारी या निर्णायक है। उदाहरण के लिए, बी की संपत्ति पर ए द्वारा कथित अतिचार के मामले में, बी ने अपने अधिकार की घोषणा के लिए और ए से कब्जा वसूल करने के लिए मुकदमा दायर किया और मुकदमा तय किया गया। इसके बाद, अतिचार के लिए ए के खिलाफ बी द्वारा आपराधिक अभियोजन में, दीवानी कार्यवाही में पक्षों के बीच पारित निर्णय प्रासंगिक होगा

और अदालत यह मान सकती है कि यह निर्णायक रूप से संपत्ति पर बी के स्वामित्व के साथ-साथ कब्जे को भी स्थापित करता है। ऐसे मामले में, ए को अतिचार के लिए दोषी ठहराया जा सकता है। धारा 42 का चित्रण जो ऊपर उद्धृत किया गया है, स्थिति को स्पष्ट करता है। इसलिए, प्रत्येक मामले में, पहला सवाल जिस पर विचार करने की आवश्यकता होगी, वह है-क्या निर्णय, आदेश या डिक्री प्रासंगिक है, यदि प्रासंगिक है-इसका प्रभाव। यह एक सीमित उद्देश्य के लिए प्रासंगिक हो सकता है, जैसे कि उद्देश्य या मुद्दे में एक तथ्य के रूप में। यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा।

32. वर्तमान मामले में, एम. एस. शेरिफ मामले में संविधान पीठ द्वारा दिया गया निर्णय [ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 397:1954 सी. आर. आई. एल. जे. 1019] बाध्यकारी होगा, जिसमें यह विशेष रूप से अभिनिर्धारित किया गया है कि कोई कठोर और त्वरित नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता है और दीवानी और आपराधिक अदालतों में परस्पर विरोधी निर्णय की संभावना एक प्रासंगिक विचार नहीं है। कानून में कहा गया है कि

> "ऐसी घटना तब होती है जब वह स्पष्ट रूप से एक न्यायालय का निर्णय लेने से बचता है जो दूसरे को बाध्य करता है, या यहां तक कि प्रासंगिक भी है, सिवाय सीमित उद्देश्य जैसे सजा या हर्जाने के।

[3] '7. संहिता की धारा 531 इस प्रकार हैः

> "531. किसी भी आपराधिक न्यायालय के किसी भी निष्कर्ष, सजा या आदेश को केवल इस आधार पर दरकिनार नहीं किया जाएगा कि जांच, मुकदमा या अन्य कार्यवाही, जिसके दौरान वह पहुंची थी या पारित की गई थी, गलत सत्र प्रभाग, जिला, उप-प्रभाग या अन्य स्थानीय क्षेत्र में हुई थी, जब तक कि यह प्रतीत न हो कि ऐसी त्रुटियां ने वास्तव में न्याय की विफलता का कारण बना है।"

अतः यह धारा अधिकारिता के दोष से संबंधित है। जैसा कि इस न्यायालय द्वारा पुरुषोत्तमदास डालमिया बनाम पश्चिम बंगाल राज्य [(1962) 2 एस. सी. आर. 101 में कहा गया हैःए. आई. आर 1961 एस. सी 1589: (1961) 2 आपराधिक न्यायालय की अधिकारिता दो प्रकार की होती है, अर्थात् (1) विशेष प्रकार के अपराधों का मुकदमा चलाने की न्यायालय की शक्ति के संबंध में अधिकारिता, और (2) इसकी क्षेत्रीय अधिकारिता। जबकि पहला मामले की जड़ तक जाता है और इसका कोई भी उल्लंघन पूरे मुकदमे को अमान्य कर देता है, दूसरा एक आकस्मिक चरित्र का नहीं है और संहिता की धारा 531 के तहत इलाज योग्य है। प्रादेशिक अधिकारिता "सुविधा के मामले के रूप में, किसी विशेष न्यायालय के काम के संबंध में प्रशासनिक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए, अभियुक्त की सुविधा जिसे उसके खिलाफ लगाए गए आरोप को पूरा करना होगा और

गवाहों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए प्रदान की जाती है जिन्हें न्यायालय के समक्ष उपस्थित होना होगा। "वास्तव में धारा 488 की उप-धारा (8) में यह प्रावधान है कि इस धारा के तहत किसी भी व्यक्ति के खिलाफ किसी भी जिले में कार्यवाही की जा सकती है जहां वह रहता है या है, या जहां वह पिछली बार अपनी पत्नी के साथ रहता है या, जैसा भी मामला हो, अवैध बच्चे की मां के साथ रहता है। इसलिए यह आम तौर पर संबंधित मजिस्ट्रेट की अधिकारिता की सीमाओं के भीतर धारा 488 के तहत आवेदन दायर करने की आवश्यकता है।'

[4] 'लागू किए जाने वाले कानून के सिद्धांत को कुछ शब्दों में कहा जा सकता है। यदि किसी विलेख में पहले के खंड के बाद बाद का खंड आता है। **खंड जो पहले के खंड द्वारा बनाए गए दायित्व को पूरी तरह से नष्ट कर देता है, बाद के खंड को प्रतिकूल के रूप में अस्वीकार किया जाना है और पहले का खंड प्रबल है। इस मामले में दोनों खंडों का मिलान नहीं किया जा सकता है और विलेख में पहले का प्रावधान बाद वाले पर प्रबल होता है। इस प्रकार, यदि 100 रुपये का भुगतान करने की वाचा और विलेख में बाद में यह प्रावधान किया गया है कि वह अपनी वाचा के तहत उत्तरदायी नहीं होगा, तो बाद के प्रावधान को घृणित और शून्य के रूप में अस्वीकार कर दिया जाएगा, क्योंकि यह वाचा को पूरी तरह से नष्ट कर देता है। लेकिन यदि बाद का खंड नष्ट नहीं करता है, लेकिन केवल पहले वाले को योग्य बनाता है, तो दोनों को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए और समग्र रूप से विलेख द्वारा प्रकट किए गए पक्षों के इरादे को प्रभाव दिया जाना चाहिए।...'**

[5] 5 प्रियंका मिश्रा बनाम मध्य प्रदेश राज्य, 2023 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 978 और विष्णु कुमार शुक्ला बनाम राज्य उत्तर प्रदेश, 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 1582